**International Journal of Research in Hindi**
**www.hindijournal.in**
**ISSN: 2582-3493**
**Received: 21-02-2026, Accepted: 24-03-2026, Published: 08-04-2026**
**Volume 8, Issue 2, 2026, Page No. 9-12**

# प्रतिबद्धता, सम्बद्धता और आबद्धता के कवि बाबा नागार्जुन

**डॉ. अमिय कुमार साहु**
विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग, राष्ट्रीय रक्षा अकदमी, खडकवासला, पुणे, महाराष्ट्र, भारत

**सारांश**
यह शोधपत्र बाबा नागार्जुन के काव्य में निहित 'प्रतिबद्धता, संबद्धता और आबद्धता' की बहुआयामी अवधारणाओं का विश्लेषण करता है। नागार्जुन को 'जनकवि' केरूप में स्थापित करने वाले तत्व उनकी जनपक्षधर दृष्टि, सामाजिकयथार्थ से गहरा जुड़ाव और मानवीय संवेदनाओं की व्यापक अभिव्यक्ति हैं। उनकी प्रतिबद्धता बहुजन समाज, सामाजिक न्याय, शोषित–वंचित वर्ग तथा लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति समर्पित है। संबद्धता के स्तर पर वे समाज, प्रकृति, लोकजीवन, संस्कृति और इतिहास से सक्रिय संवाद स्थापित करते हैं, जिससे उनकी कविता जीवंत औरयथार्थपरक बनती है। वहीं आबद्धता उनके पारिवारिक, भावनात्मक और स्मृतिपरक संबंधों की गहराई को व्यक्त करती है, जो मानवीय आत्मीयता का आधार है। इस प्रकार नागार्जुन का काव्य केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति न होकर सामाजिक चेतना, लोक–संवेदना और मानवीय मूल्यों का सशक्त दस्तावेज़ बनकर उभरता है।

**मूल शब्दः** प्रतिबद्धता, संबद्धता, आबद्धता, जनकवि, सामाजिकयथार्थ, लोकजीवन

भारतीय हिंदी कविता का बीसवीं शताब्दी का परिदृश्य समकालीन समाज की विविध, जटिल और बहुस्तरीय समस्याओं का दस्तावेज़ है। इस समूचे साहित्यिक परिदृश्य में बाबा नागार्जुन का रचनात्मक अवदान अद्वितीय है। उनको 'जनकवि' की संज्ञा दी गई, जो केवल शैलीगतया बिंबात्मक नहीं, बल्कि उनके समग्र साहित्यिकयोगदान और उसकी मूलभूत प्रवृत्तियों से पैदा हुई है। नागार्जुन की कविता अपने समय, समाज औरयथार्थ से जुड़ती है। जन–जीवन कायथार्थ, किसान–मजदूर का दुःख–सुख, ग्रामीण परिवेश, सत्ता, राजनीति, अराजकता, अन्याय, प्रेम, प्रकृति, स्त्री और पीड़ा–इन सब घटकों को कीर्ति–पंक्तियों में ढालते हुए नागार्जुनएक अनूठी बौद्धिक प्रतिबद्धता, गहराई और फिलॉसफी प्रस्तुत करते हैं। वे सिर्फ़ विरोध, आंदोलन अथवा आलोचनात्मक स्वर के कवि नहीं हैं, बल्कि भारतीय लोक–आत्मा के चितेरे भी हैं। वे 'आंबेडकर', 'कबीर', 'मार्क्स', 'गांधी' से लेकर 'स्वयं के लोक' के साथ निरंतर संवाद करते रहते हैं। नागार्जुन की कविता जहाँएक ओर प्रतिरोध है, तो दूसरी ओर आशा, करुणा और स्वप्न भी है। वे हमेशा अपनेयुग के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक संकटों, त्रासदियों और सत्यताओं के बीच जनपक्षधरता, दायित्वबोध और रचनात्मक संघर्ष और आलोचना के साथ नए विमर्शस्थान निर्मित करते हैं। वे अपने विचारों से जितना प्रतिबद्ध हैं वहाँ अपनी घुमक्कडी प्रवृत्ति के कारण हरएक से संबद्धता रखते हैं औरएक पारिवारिक मनुष्य केरूप में अपनो और अपने गांव के प्रति आबद्धता को भूलते नहीं हैं.

## प्रतिबद्धता का साहित्यिक मूल्य और नागार्जुन

प्रतिबद्धता का अर्थ है—किसी विचार, मूल्य, सामाजिक उद्देश्यया जनपक्ष के प्रति पूरी तरह नैतिक, बौद्धिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक निष्ठा। नागार्जुन केयहाँयह प्रतिबद्धता मुखररूप में व्याप्त है। उनकी हर बड़ी कविता किसी न किसी लोकप्रिय, जनगण, शोषित, संघर्षशक्ति, लोकतंत्रीय मूल्यया प्रतिरोध के प्रति सतत समर्पण महसूस कराती है। नागार्जुन की कविता 'प्रतिबद्ध हूँ' इस भाव का जीवंत उदाहरण है –

"प्रतिबद्ध हूँ
जी हाँ, प्रतिबद्ध हूँ–
बहुजन समाज की अनुपल प्रगति के निमित्त–
संकुचित श्स्वश की आपाधापी के निषेधार्थ –
अविवेकी भीड़ की 'भेड़िया–धसान' के खिलाफ़---"[1]

यहाँ कवि न केवल अपनी निजता, किन्हीं निजी स्वार्थों, वरन् सृष्टि के बहुजन पक्ष, समावेशी प्रगति और भीड़वाद के विरुद्ध अपनी स्पष्ट बौद्धिक–साहित्यिक प्रतिबद्धता को समाज के सामने रखता है।

बाबा नागार्जुन की कविता की सबसे बड़ी ख़ासियतयह है कि वह केवल कलावादीया बुद्धिवादी नहीं, बल्कि सामाजिक पक्षधरता, व्यवस्था विरुद्ध चेतना और जन–संघर्ष का हथियार है। वे विकासवादी समाज की पीड़ाओं, क्षय, अन्याय, शोषण, भूख, बेकारी, गरीबी, अशिक्षा, शोषण, पुलिसिया दमन, किसानों–श्रमिकों के सवाल–सब पर कविता का हथियार चलाते हैं। उनके लिए कविता केवल निजी चिंतनया सौंदर्योपासना नहीं, अपितु जनचेतना और प्रतिरोध का आसान है। आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा कहते हैं–

"नागार्जुन की कविता केवल संवेदनाया सौंदर्यबोध का विधान नहीं, वह हमारायथार्थ है, संघर्ष का दस्तावेज है, उसमें जनता के असंतोष और राज्यसभाई जीवन के बीच गहरा द्वंद्व दिखाई देता है।"[2] इस कविता में कवि ने अपनी निष्ठा केवल मानव समाज तक सीमित न रखकर सम्पूर्ण चर–अचर सृष्टि तक फैला दी है। इस कविता में 'प्रतिबद्धता' की अवधारणा वैयक्तिक, बौद्धिकया राजनीतिक सीमाओं से बहुत आगे तक जाती है। नागार्जुन की प्रतिबद्धता बहुजन समाज की बेहतरी के लिए है। उनकी कविता में नेताया सत्ता–प्रतिष्ठान का सीधा नामोल्लेख कई बार मिलता है, लेकिन वहाँ भी उनका लक्ष्य केवल आलोचनाया विरोध भर नहीं, बल्कि आमजन की आशा और आत्मगौरव का पुनरुत्थान है। डॉ. रामविलास शर्मा नागार्जुन की इसी कविताई के बारे में कहते हैं– "जनसरोकारों की निर्भीक पक्षधरता नागार्जुन की कविता को समकालीन हिंदी साहित्य मेंएक अलहदा पहचान देती है। उनकी प्रतिबद्धता बौद्धिक क्रांति नहीं, बल्कि सामाजिक क्रांति की चेतना है।"[3]

नागार्जुन का प्रतिबद्ध कवि–व्यक्तित्व केवल विचारधारा के लिए नहीं, बल्कि शोषित–पीड़ित वर्ग के पक्ष में निर्भीक हस्तक्षेपकारी भूमिका में स्थापित होता है।यही कारण है कि उनकी कविताएँ सुविधाभोगी वर्ग, सत्ता–संरचना और पाखंड के खिलाफ़ जन–मन का प्रखर स्वरूप बन जाती हैं। आलोचक अपूर्वानंद का मत है कि "नागार्जुन का हस्तक्षेपकारी रचनाकार होना उनकी कलात्मकता के साथ–साथ अपनी प्रतिबद्धता से जुड़ा है। वेयुग का उजास और धूप स्वयं में समेटे थे..."[4] "अकाल और उसके बाद" कविता इस प्रतिबद्धता काएक जीता–जागता उदाहरण है–

"कई दिनों तक चूल्हा रोया,/चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उसके पास..."[5]

इस कविता में कवि समाज के सबसे उपेक्षित, वंचित और अभावग्रस्त हिस्से के प्रति अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त करते हैं। खाना न होने की पीड़ा, चूल्हे का न जलना, चक्की का उदास रहना–इन बिम्बों के माध्यम से नागार्जुन जनता की वेदना के प्रवक्ता केरूप में सामने आते हैं।
यह कविता केवल भूख, गरीबीया अकाल नहीं, संस्कृति में घुलती–सड़ती नृशंसता का विस्तृत आख्यान है। चूल्हे का 'रोना', चक्की का 'उदास' रहना, कुतिया का 'सोना' –ये सब प्रतीक वस्तुतःएक सामूहिक मानसिक भूख, पीड़ा और जीवन की अपार त्रासदी के बिम्ब हैं। भाषा की अनगढ़ता, कथ्य की तीव्रता और संवेदना की गहराई–तीनों का दुर्लभ मेल है। विख्यात आलोचक नामवर सिंह लिखते हैं– "'अकाल और उसके बाद' जैसी कविताएँ नागार्जुन को समकालीनयथार्थ की रीढ़ बना देती हैं, उनकी कविता भीतर तक हिला देने वाली संवेदना के साथ प्रतिरोध काऐसा स्वर देती है, जो स्वयं में जनआंदोलन है।"[6]यहाँ नागार्जुन की प्रतिबद्धता संकुचित नहीं, बल्कि आनंद–पीड़ा,यथार्थ–सपना और जनमानस के साथ आक्रांत दिखाई देती है। "उनको प्रणाम" कविता में कवि कहता है –

"रण की समाप्ति के पहले ही/जो वीर रिक्त तूणीर हुए!
उनको प्रणाम!...
छोटी–सी नैया लेकर/उतरे करने को उदधि–पार;
मन की मन में ही रही,/स्वयं हो गए उसी में निराकार!
उनको प्रणाम!"[7]

यह कविता पराजित, हताशया उपेक्षितयोद्धाओं, विस्मृत जन और असफल कार्यकर्ताओं को संबोधित है, जोयुगपरिवर्तन की लड़ाई में शायद सफल नहीं हो सके, लेकिन जिनका आत्मबल और संघर्ष आज भी आदर्श है।यहाँ नागार्जुन की 'प्रतिबद्धता' नायकत्व–पूजाया विजय के जश्न में नहीं, बल्कि सामाजिक हाशिये पर खड़े अनजान, अनाम, छोटे लोगों को सम्मान और जिजीविषा देने में है। इस कविता में वे असफल संघर्षशीलों, उपेक्षित बलिदानियों और हाशिए के लोगों को 'प्रणाम' कर अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता दिखाते हैं।

'अन्न–पचीसी' कविता नागार्जुन की प्रतिबद्धता का दूसरा उदाहरण है –

"कबिरा खड़ा बाज़ार में, लिए लुकाठी हाथ
बन्दा क्या घबराएगा, जनता देगी साथ
छीन सके तो छीन ले, लूट सके तो लूट
मिल सकती कैसे भला, अन्नचोर को छूट
आज गहन है भूख का, धुंधला है आकाश
कल अपनी सरकार का होगा पर्दाफ़ाश"[8]

यह कविता आमजन की भूख, संघर्ष और उसकी मांगों को स्वर देती है।यहाँ कवि समाज के वास्तविक दुख और अन्याय के प्रति अपनी रचनात्मक प्रतिबद्धता प्रकट करता है।

**संबद्धता – समय, समाज, प्रकृतिएवं संस्कृति से रचनात्मक संवाद**
संबद्धता का अभिप्राय है– स्व के पार जाकर समाज, इतिहास, भाषा, प्रकृति, परंपरा, संस्कृति, राजनीति, लोक और समकालीन संदर्भों से त्वरित जुड़ाव। नागार्जुन इसी कारण 'जनकवि' माने जाते हैं, क्योंकि वे बहिर्मुखी, बिंदास, विनोदप्रिय और सामाजिक सरोकारों के सजग कवि हैं। उनके लिए लोक जीवन केवल विषय नहीं, बल्कि आत्मा है। उनकी कविता का सारा ताना–बाना उन्हीं संबंधों से जुड़ा है जिसमें मनुष्य अपने परिवेश, प्रकृति, स्मृति, संघर्ष, परंपराओं के साथ चलता है। नागार्जुन का अधिकांश काव्य 'संबद्धता' की मिसाल है जहाँ वेएक ओर किसान, मजदूर, शोषित–वंचित वर्ग के साथ गहरा जुड़ाव अनुभव करते हैं और दूसरी ओर भारतीय परंपराओं, लोक जीवन और परिवेश से तारतम्य स्थापित करते हैं। त्रिलोचन शास्त्री के शब्दों में–"नागार्जुन की संबद्धता लोकसंस्कृति, वर्ग–संघर्ष और समाज की दीनता से है, उनकी कविता के बिना समकालीन लोक नहीं समझा जा सकता।"[9]
नागार्जुन केवल मुद्दोंया विचारधाराओं से ही नहीं, जीवन के छोटे–बड़ेरूपों, प्रकृति, लोकजीवन तक से संबद्ध हैं। उनका संवाद कभी प्रकृति, कभी लोक जीवन, कभी किंवदंतु समाज से है। विजय बहदूर सिंह लिखते हैं– "नागार्जुन की संवेदना उन्हें केवल राजनीतिज्ञ और विचारक नहीं बनाती, उसमें लोकधर्मी जनचेतना का वह आलोक है जो उन्हें जनकवि बनाता है। वह संबद्धता ही है जो उन्हें किसान–श्रमिक के हिस्से की आवाज़ देती है।"[10] नागार्जुन के लिए कविता न केवल जन–जीवन की पुकार है, बल्कि विस्मृत वर्गों, प्रकृति, लोक–संस्कृति, प्रेम की प्रतिध्वनि भी है। प्रकृति के प्रति संबद्धता काएक उदहरण है कविता दृ'बादल को घिरते देखा है'–

"अमल–धवल गिरि के शिखरों पर,/बादल को घिरते देखा है
छोटे–छोटे मोती जैसे,/ उसके शीतल तुहिन कणों को,
मानसरोवर के उन स्वर्णिम/ कमलों पर गिरते देखा है,
बादल को घिरते देखा है..."[11]

यहाँ नागार्जुन प्रकृति के छटा का वर्णन करते हुए मनुष्य के सौंदर्यबोध और संवेदनशीलता को सामाजिकयथार्थ से जोड़ देते हैं।यह संबद्धता उन्हें केवलयथार्थवादी नहीं, संवेदनशील भी बनाती है।यह कविता प्रकृति के सौंदर्य और अनुभव का गहरा दस्तावेज़ है। नागार्जुनयहाँ संबद्धता प्रकृति के साथ निर्मल–शुद्ध सह–अस्तित्व में जिसे शब्दों की संपूर्ण सांगीतिकता और काव्यात्मकता दी है। पहाड़ी के शिखर, मानसरोवर, स्वर्णिम कमल–यह सारे बिंबएक गहरे पर्यावरणीय और सांस्कृतिक सम्बन्ध की ओर संकेत करते हैं। दया प्रकाश सिंह लिखते हैं–"नागार्जुन केयहाँ प्रकृति के बिंब केवल आनन्द, सजावटया कल्पना–लोक नहीं, उन बिंबों के माध्यम से सुदूर हिमालय, मानसरोवर, पर्वतीय संस्कृति, ग्राम्य जीवन–सब कविता से जुड़ जाते हैं।"[12]

यही सम्बद्धता – "गुलाबी चूड़ियाँ" कविता में 'मटमैली बाँहें वाली उस स्त्री के पारंपारिक शोषण के प्रतिएक प्रश्न चिन्ह बनकर उजागर होती है –

"गुलाबी चूड़ियाँ/ उन मटमैली बाँहों पर
क्यों शोभित नहीं हो सकतीं...?
तुमनेयह प्रश्न /कितनी बार उठाया था
अपनी थकी हुई /माँ के सामने..."[13]

यहाँ कवि–मन समाज के उस तबके के प्रति संबद्ध है, जो शोषित, उपेक्षित, स्त्री और गरीब है। 'मटमैली बाँहें' अपने मेंएक पूरा लोक, दुख और जिजीविषा लिए, जिसका सौंदर्य, सपना और अधिकार परंपरागत विभाजनों और शोषण के तले दब जाता है।यह कविता केवल स्त्री अधिकार की नहीं, बल्किएक बड़े सामाजिक परिवर्तन, संबद्धता और करुणा की मांग भी करती है। विजय बहादुर सिंह का कहना है– "नागार्जुन की संबद्धता केवल श्रमिक, किसान और मेहनतकश वर्ग तक सीमित नहीं, उनकेयहाँ गाँव, लोक, स्त्री, प्रकृति, पेड़, पशु, पक्षी सभी जीवंत चरित्र हैं। उन्होंने कविता को संबद्धता की सबसे बड़ी प्रयोगशाला बनाया।"[14] यह कविता समाज के निर्धन वर्ग की स्त्री की ओर

कवि की निगाह को दर्शाती है – प्रेम, संवेदना और सामाजिक हाशिए पर खड़ी स्त्री की अस्मिता के साथ संबद्धता।

## नागार्जुन की आबद्धता

आबद्ध हूँ, जी हाँ, आबद्ध हूँ –/स्वजनदृपरिजन के प्यार की डोर में ...
प्रियजन के पलको की कोर में... /सपनीली रातों की भोर में ...
बहुरूपा कल्पना रानी के आलिंगन–पाश में .../
तीसरी चौथी पीढियों के दंतुरित शिशु सुलभ हास में३..
लाख–लाख मुखडों के तरूण हुलास में../आबद्ध हूँ, जी हाँ, आबद्ध हूँ.[15]

नागार्जुन की आबद्धता इस कविता से पूर्णता से स्पष्ट हो जाती है. नागार्जुन केवल विचारों से ही नहीं, बल्कि अपनी समग्र चेतना से इन अवधारणाओं से आबद्ध है।यह छोटी–सी पंक्ति नागार्जुन के पूरे रचनात्मक जीवन–दर्शन का सार है। वे स्वयं को केवल मनुष्य, समाज,या समय से ही नहीं, समूची किसानसंस्कृति, ग्रामीण सृष्टि, पेड़–पौधे, पशु–पक्षी, माटी, लोकगीत–इन सब से आबद्ध मानते हैं। उनकी कविता का स्वभाव हीऐसा है कि उसमें जीवन के समस्त रंग, पीड़ा, उन्माद, विश्वास और समय की गति पिरोई जाती है। विजय बहादुर सिंह के अनुसार– "नागार्जुन की काव्य–आबद्धता बहुआयामी है–विद्रोही चेतना और समन्वयी संस्कृति का समागम। इसी बहुआयामी आबद्धता के कारण वे समय–समाज ग्राह्य और शाश्वत दोनों हैं।"[16]
यह 'आबद्धता' किसी जकड़न का संकेत नहीं, बल्कि अपनत्व स्मृति और मानवीय स्नेह का स्वीकार है। कवि अपने रिश्तों, भावनाओं, औरयादों से गहरे तक बंधा है। वह स्वजन–परिजन परिवार के प्रेम में, प्रिय के स्पर्श में, कल्पना और अगली पीढ़ियों की मुस्कान में अपना जीवन देखता है। "तीसरी–चौथी पीढ़ियों के दंतुरित शिशु सुलभ लाख–लाख मुखड़ों के तरुण उल्लास में... "यह कविता स्पष्ट करती है कि किसी से, किसी स्मृतिया भाव से बंधे रहना ही असल में जीवन की ऊर्जा, अर्थ और निरंतरता का संचार है. नागार्जुन की आबद्धता उनकी कविता 'यह दंतुरित मुस्कान' में संबंधों की शाश्वतता बनकर झलकती है. इस कविता में 'आबद्धता' पारिवारिक और पीढ़ीगत संबंधों में प्रत्यक्ष है —

तुम्हारीयह दँतुरित मुस्कान / मृतक में भी डाल देगी जान
धूले–धूसर तुम्हारे य्ह गात
छोड कर तालाब मेरी झोपडी में खिल रहे जलजात.
.....
यदि तुम्हारी मा न माध्यम बनी होती आज/ मैं न सकता देख
मैं न पाता जान/ तुम्हारीयह दँतुरित मुस्कान.[17]

यहाँ कवि अपनी संतान की मुस्कान में जीवन के अर्थ, नूतनता और आशा की अनुभूति करता है। कवि माँ, पिता, और पुत्र जैसे तत्त्वों को 'अनुभवों की कड़ी' केरूप में देखता है:यदि माँ माध्यम न बनी होती, तोयह मुस्कान,यह पहचान सम्भव न होती। इसलिए, नागार्जुन के लिए, पीढ़ी–दर–पीढ़ी बहती संवेदनाएँ, स्मृति और संस्कारों से बंध जाना ही मनुष्य के अस्तित्व की सार्थकता है।

'तन गई रीढ़' कृ कविता आत्मीयता का अवचेतन की आबद्धता काएक उदाहरण है – कभी किसी के छूने मात्र से ही शरीर और मन में ऊर्जा दौड़ जाती है।

झुकी पीठ को मिला / किसी हथेली का स्पर्श/
तन गई रीढ"/३३३../
कौंधी कही चितवन/ रँग गए कही किसी के हौंठ
निगहौं के जरिए जादू घुसा अँदर/ तन गयी रीढ.[18]

दूसरों की दृष्टि, मुस्कानया माहौल में बसी अनुभूतियाँ हमें भीतर तक बाँध देती हैं, उन्हें गहराई से प्रभावित करती हैं।यह दर्शाता है कि नागर्जुन की आबद्धता सिर्फ शाब्दिक रिश्तों से नहीं, बल्कि अनकहे, अस्पर्श्य, सूक्ष्म अहसासों से भी बँधी रहती है।

'तब मैं तुम्हें भूल जाता हूँ' कविता बंधन और स्मृति का द्वंद्व को भी प्रकट करता है. पर अततः प्रिय के स्मृति ही जीत जाती है.

पहन शुक्र का कर्णफूल जब/ पीछे की नीरव घडियाँ में
रजनी को निखार पाता हूँ / नील गगन के नक्षत्राँ को
जब अविरल बिखरा पाता हूँ/ तब मैं तुम्हें भूल जाता हूँ.
...../ जब सहस्रदल कमलाँ का–सा
खिला हुआ उनका मुख मँडल/तनिक ध्यान में भी लाता हूँ
तब मैं तुम्हें भूल जाता हूँ.[19]

कई बार मनुष्य विस्मृति की ओर बढ़ना चाहता है, पर स्मृति और बंधन से पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाता– लेकिन तुम, प्रिय, स्मृति, बचपन, अनुभूत संबंध बार–बार लौट आते हैं।– प्रकृति, सौंदर्य, साहसिक जीवन, नयनाभिराम दृष्य सब कुछ उसे क्षण भर आत्मविस्मृति दे सकते हैं, पर अंततः वह पुनः प्रिय स्मृतिया सम्बन्ध में बँध जाता है। अर्थात, नागार्जुन केयहां 'आबद्धता' केवल सामाजिकया पारिवारिक नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक, स्मृति–संवेदना के स्तर पर भी गहन है।
नागार्जुन की दृष्टि में, आबद्धता कोई जकड़नया परतंत्रता नहीं, बल्कि वह शक्ति है जो जीवन को अर्थ देती है, संबंधों को पुष्ट करती है, पीढ़ी–दर–पीढ़ी संवेदना, भाषा, संस्कृति, स्मृति और प्रेम के प्रवाह को बनाए रखती है। इसी प्रवाह के कारण उनकी कविता में गहराई, आत्मीयता और व्यापक मानवता का अनुभव होता है.
बाबा नागार्जुन के बहुआयामी काव्य–व्यक्तित्व बीसवीं शताब्दी के भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक परिदृश्य में जनता के दुःख–सुख, किसान–मजदूर जीवन, शोषण, अन्याय, सत्ता, प्रकृति और स्त्री–जीवन केयथार्थ को निर्भीकता से उजागर करता है। उनकी प्रतिबद्धता किसी विचारधारा तक सीमित न होकर बहुजन समाज, लोकतांत्रिक मूल्यों और सामाजिक न्याय के प्रति समर्पित है। नागार्जुन की संबद्धता समाज, लोकजीवन, प्रकृति, परंपरा और संस्कृति के साथ गहरे संवाद में प्रकट होती है। वे केवल राजनीतिक कवि नहीं, बल्कि लोक–आत्मा के चितेरे हैं। लोक संस्कृति, किसान–श्रमिक वर्ग, पर्वतीय और ग्रामीण जीवनकृसब उनके काव्य में जीवंत उपस्थिति रखते हैं।उनकी आबद्धता पारिवारिक प्रेम, स्मृतियों, पीढ़ियों, आत्मीय रिश्तों और मनोवैज्ञानिक अनुभूतियों से निर्मित है। नागार्जुन का संपूर्ण काव्य भारतीय समाज, जनमानस और मनुष्य की संवेदना से उनके गहरे संबंधों का सशक्त दस्तावेज़ हैकृजहाँ प्रतिबद्धता विचार की शक्ति, संबद्धता सामाजिक जुड़ाव और आबद्धता मानवीय आत्मीयता का प्रतीक है।

## संदर्भ सूची


1. राजेश जोशी – संपादक– नागार्जुन रचना संचयन– साहित्य अकादमी, दिल्ली (2005) पृ–19
2. रामविलाश शर्मा रचनावली–भूमिका से – राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली (2022)
3. प्रतिनिधि कविताएँ: नागार्जुन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली ( 2017) पृ 42
4. उद्धृत, विजय बहादूर सिंह – नागार्जुन: अनभिजात का क्लासिक, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली (2017)
5. राजेश जोशी – संपादक– नागार्जुन रचना संचयन– साहित्य अकादमी, दिल्ली (2005) पृ–100
6. उद्धृत, विजय बहादूर सिंह – नागार्जुन: अनभिजात का

क्लासिक, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली (2017) पृ–108
7. राजेश जोशी – संपादक– नागार्जुन रचना संचयन– साहित्य अकादमी, दिल्ली (2005) पृ–90
8. प्रतिनिधि कविताएँ: नागार्जुन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली (2017) भूमिका से.
9. उद्धृत, प्रतिनिधि कविताएँ: नागार्जुन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली (2017) भूमिका से .
10. विजय बहादूर सिंह – नागार्जुन: अनभिजात का क्लासिक, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली (2017) पृ– 109
11. राजेश जोशी – संपादक– नागार्जुन रचना संचयन– साहित्य अकादमी, दिल्ली (2005) पृ–35
12. दया प्रकाश सिंह – हिंदी कविता की नयी चाल, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली (2010)
13. राजेश जोशी – संपादक– नागार्जुन रचना संचयन– साहित्य अकादमी, दिल्ली (2005) पृ–98
14. विजय बहादूर सिंह – नागार्जुन: अनभिजात का क्लासिक, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली (2017)
15. राजेश जोशी – संपादक– नागार्जुन रचना संचयन– साहित्य अकादमी, दिल्ली (2005) पृ–20
16. विजय बहादूर सिंह – नागार्जुन: अनभिजात का क्लासिक, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली (2017)
17. राजेश जोशी – संपादक– नागार्जुन रचना संचयन– साहित्य अकादमी, दिल्ली (2005) पृ–54
18. राजेश जोशी – संपादक– नागार्जुन रचना संचयन– साहित्य अकादमी, दिल्ली (2005) पृ–53
19. राजेश जोशी – संपादक– नागार्जुन रचना संचयन– साहित्य अकादमी, दिल्ली (2005) पृ–51–52